रविवारीय

लौकिक-अलौकिक दिवस

दिवस मनाने की औचित्यता और सार्थकता?

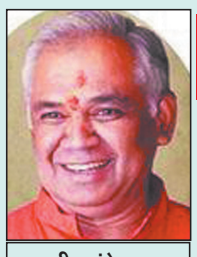

राजीव खंडेलवाल
(लेखक वरिष्ठ कर सलाहकार एवं पूर्व सुधार न्यास अध्यक्ष हैं)

हमारे यहाँ वर्ष के 365 दिनों में शायद ही कोई ऐसा दिन बचा हो, जिस पर एक या दो दिवस न मनाए जाते हों. कुछ दिवस लौकिक—यथा स्मृति एवं घटना-प्रधान दिवस—तो कुछ अलौकिक स्वरूप, जैसे जयंती, पुण्यतिथि अथवा वैवाहिक वर्षगांठ. समय के साथ दिवस मनाना एक यंत्रवत् परिपाटी बन गया है, जिसमें भाव, उद्देश्य और विवेचना का स्थान प्राय: खो जाता है.

किसी महान व्यक्ति के समर्पण या बलिदान अथवा किसी घटना की स्मृति में आयोजित इन दिवसों पर लंबे-चौड़े भाषण और बधाई-संदेश देकर हम उस दिवस की इतिश्री कर देते हैं. परिणामत: अमीर-ए-कारवां अंतत: गुबार-ए-कारवां बनकर रह जाता है. जबकि वास्तव में दिवस मनाते समय एक पंक्ति की औपचारिक बधाई के बाद आत्मवलोकन व आत्मचिंतन का वह स्वर मन-मस्तिष्क में नक्कारे की भांति बजना चाहिए कि— क्या मैं उस उद्देश्य को अगले 365 दिनों में और मजबूत करने हेतु कोई ठोस कदम उठा सकता हूँ? और यदि अब तक कुछ नहीं किया, तो क्या आने वाले 365 दिनों में इस दिवस की सार्थकता हेतु मेरी कोई सार्थक आहुति हो सकेगी?

संविधान दिवस: एक सकारात्मक पहल, कुछ अनकहे प्रश्न- 26 नवंबर 1949 को संविधान स्वीकार किए जाने की स्मृति में 26 नवंबर को संविधान दिवस घोषित करने का श्रेय निस्संदेह प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को जाता है. इसी प्रकार 21 जून (अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस), राष्ट्रीय एकता दिवस (सरदार पटेल जयंती) और गुड गवर्नेंस डे (अटल बिहारी वाजपेयी जयंती) की उल्लेखनीय पहल भी नरेंद्र मोदी की ही है. प्रधानमंत्री की देश के नाम लिखी चिट्ठी ऊर्जा, प्रेरणा और उपलब्धियों का सार लेकर आती है. परंतु—पगड़ी दोनों हाथों से संभाली जाती है—संविधान को मजबूत करने की बात करते समय उन कमियों के उल्लेख की अपेक्षा थी, जिनके रहते संविधान की वास्तविक शक्ति पूर्ण नहीं हो पाती है. अनुच्छेद 370 = आधा काम अभी बाकी.

हमारे संविधान का मूल तंत्र लोकतंत्र है. जिसका उल्लेख करते हुए प्रधानमंत्री द्वारा अनुच्छेद 370 (2) हटाना ऐतिहासिक कदम है. किंतु अनुच्छेद 370 (1) अब भी संविधान का हिस्सा है, जिसे हटाने के लिए संविधान संशोधन आवश्यक है. और सबसे महत्वपूर्ण— जम्मू-कश्मीर अब तक पूर्ण राज्य का दर्जा प्राप्त नहीं कर सका है. यह वही राज्य है, जो अनुच्छेद 370 हटाए जाने पूर्व विशेष दर्जा लिए हुए पूर्ण राज्य था. भाजपा के घोषणा पत्र में भी पूर्ण राज्य का दर्जा लौटाने का वादा किया गया था. उच्चतम न्यायालय ने भी इसे यथाशीघ्र बहाल करने की अपेक्षा व्यक्त की थी. परंतु अवाम अभी भी तेल देखो और तेल की धार देखो की प्रतीक्षा में है.

संविधान- केवल पुस्तक नहीं, लोकतंत्र की आत्मा है. संविधान का अर्थ केवल उसके शब्दों को यांत्रिक रूप से लागू करना नहीं है, बल्कि बिटवीन द लाइंस निहित जनभावनाओं को समझकर उन्हें धरातल पर उतारना है. अति प्राचीन काल से गौतम ऋषि और वात्स्यायन से लेकर चाणक्य और वाचस्पति मिश्र तक भारतीय न्याय-शास्त्र में प्रयोजन (हेतु) को अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया है. इसी कसौटी पर यदि देखें तो चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति प्रणाली पारदर्शी एवं

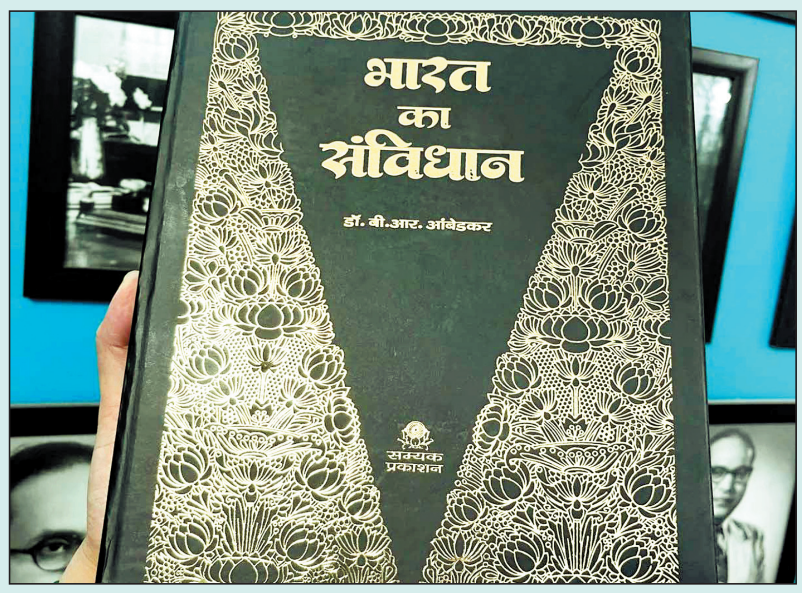

प्रयोजन-सिद्ध नहीं मानी जा सकती. यह भी आत्मावलोकन का विषय है.

आरटीआई संशोधन (2019) = पारदर्शिता पर आघात- सूचना का अधिकार अधिनियम (2005) ने भ्रष्टाचार पर अंकुश लगा कर लोकतंत्र को शक्ति दी थी. परंतु 2019 का संशोधन केंद्रीय एवं राज्य सूचना आयुक्तों की स्वतंत्रता और स्वायत्तता को क्षीण करता है. यह मुद्दा भी संविधान दिवस पर विमर्श का पात्र था.

पारदर्शिता पर लगाम- मतदाताओं के वीडियो रिकॉर्डिंग उपलब्ध कराने के नियम को ही हरियाणा उच्च न्यायालय के आदेश के बाद बदल दिए गए और रिकॉर्डिंग उपलब्ध कराना लगभग असंभव कर दिया गया. क्या यह भी संविधान की आत्मा स्वतंत्र एवं निष्पक्ष (फ्री एंड फेयर) चुनाव पर सीधी चोट नहीं है?

चुनाव आयोग द्वारा संविधान का मखौल - बिहार चुनाव में चुनाव आयोग ने चुनाव के दौरान मतदाताओं के खाते सरकार की योजना के पैसे के ट्रांसफर पर रोक न लगाकर आदर्श आचार संहिता के भाग ढ्ढ के नियम 4 का खुल्लम खुल्ला केवल उल्लंघन किया है, बल्कि पक्षपातपूर्ण कार्य भी किया है.

इसके अलावा, यह भाग ढ्ढ (सामान्य आचरण) के नियम 7 से भी जुड़ा है, जो मतदाताओं को प्रलोभन देने या प्रभावित करने वाली किसी भी गतिविधि (जैसे नकद, उपहार या लाभ) पर प्रतिबंध लगाता है. यह चुनाव आयोग के दिशानिर्देशों के तहत वोटर ब्राइबरी (मतदाता रिश्वत) माना जा सकता है, जो भारतीय दंड संहिता की धारा 171क्र और 171श्व (चुनावी रिश्वत और अवैध प्रभाव) के अंतर्गत अपराध है.

चुनाव आयोग कि इस पर चुप्पी (कोई कार्रवाई न करना) पक्षपातपूर्ण इसलिए है कि पुर्व में चुनाव आयोग ने राजस्थान, तमिलनाडु वह आंध्र प्रदेश में सरकारों द्वारा चुनाव के दौरान दिए लाभों पर रोक लगा दी थी.

क्या संविधान दिवस पर इस पर विचार नहीं किया जाना चाहिए था? उच्चतम न्यायालय- क्या जिम्मेदारी पूरी हुई? संविधान की व्याख्या का सर्वोच्च अधिकार सुप्रीम कोर्ट के पास है. परंतु प्रश्न यह है कि— क्या सर्वोच्च न्यायालय अपने उत्तरदायित्व को परिणामकारी रूप से निभा पाया है? कई निर्णयों में न्यायालय ने असंवैधानिकता तो घोषित की, पर उसके वास्तविक लाभ संबंधित पक्षकारों तक नहीं पहुँचे. इससे पंच बिल्ली कहें तो बिल्ली ही सही वाली जड़ मानसिकता को बल मिलता है.

उच्चतम न्यायालय की भूमिका: क्या आत्ममंथन आवश्यक नहीं?-संविधान की व्याख्या का अंतिम अधिकार सिर्फ सुप्रीम कोर्ट को है. संविधान क्या है उसकी मंशा क्या है और संविधान सम्मत क्या है या निर्णय सुप्रीम कोर्ट ही कर सकता है. प्रश्न यह है कि— क्या न्यायालय अपने इस दायित्व को हर बार पूर्ण रूप से निभा पाया है?

कई निर्णय ऐसे रहे, जिनमें संविधान के अनुच्छेद तो दर्ज हुये, पर वास्तविक परिणाम उस भावना के अनुकूल नहीं निकला. कहीं निर्णय असंवैधानिकता घोषित करता है, पर उसका लाभ पक्षकार को नहीं मिलता. कहीं न्यायालय की भावना को दरकिनार कर तकनीकी छूट का दुरूपयोग कर लिया जाता है — पंचों का कहना सिर माथे, लेकिन परनाला वहीं गिरेगा. चुनाव आयुक्त नियुक्ति संबंधी अनूप बरनवाल निर्णय इसकी ताजा मिसाल है.

इसके अतिरिक्त— नागरिकता संशोधन अधिनियम पर 237 याचिकाएँ लंबित हैं, और असम का पूर्ण हुआ अब तक अधिसूचित नहीं हुआ. यह भी असंगति है.

उच्चतम न्यायालय के दोहरे भाव वाले कुछ प्रमुख निर्णय

1. केशवानंद भारती (1973)
संसद की संशोधन शक्ति भी मानी, पर मूल संरचना से बाँध भी दिया. दोनों पक्ष सुरक्षित.

2. एस.आर. बोम्मई (1994)
राष्ट्रपति शासन की न्यायिक समीक्षा स्वीकार, पर इसे राजनीतिक निर्णय भी बताया—दो अर्थ.

3. शायरा बानो (ट्रिपल तलाक, 2017)
तीन तलाक अवैध, पर जजों के तर्क भिन्न—निर्णय दो दिशाओं में खुला.

4. नरेश मिराजकर (1967)
न्यायिक आदेश रिट से चुनौती योग्य नहीं, फिर मौलिक अधिकार का अपवाद भी—दोहरे निष्कर्ष.

5. मेनका गांधी (1978)
सरकारी प्रक्रिया मान्य, पर उसे न्यायसंगत-उचित-युक्तिसंगत होने की बाध्यता भी—दोहरे अर्थ.

6. कोयला घोटाला और सीबीआई पिंजरे का तोता (2013)
सीबीआई की तीखी आलोचना, पर उसे संवैधानिक संस्था न बनाने का निर्णय—मिश्रित संदेश.

7. श्रेया सिंघल (धारा 66ए, 2015)
66ए रद्द, पर IT Act की अन्य कठोर धाराएँ यथावत—आंशिक स्वतंत्रता, आंशिक नियंत्रण.

8. चुनावी बॉन्ड (2024)
स्कीम असंवैधानिक, पर पूर्व लेन-देन अप्रभावित—अधूरा उपचार.

व्यंग्य

तोड़ने और तुड़वाने का मजा

रवि उपाध्याय
लेखक व्यंगकार और राजनीतिक समीक्षक हैं)

तोड़ना और तुड़वाना हमारे जीवन का अंग बन गया है. इन दोनों क्रियाओं में जो आनंद और दु:ख है उसका शब्दों में बयान या कहिए बखान नहीं किया जा सकता है. इस दुनिया में यदि सबसे ज्यादा बार अगर कोई दो चीजें सबसे ज्यादा बार तोड़ी गई है तो उनमें एक है दिल और दूसरी है कसमें यानि प्रॉमिसेस. इसके अलावा कानून तोड़ने की घटनाएं तो रोज व रोज होती ही रहतीं हैं. मेरा मन यह पक्की तौर पे मानता है कि दिल और कसमें - वादे सदियों से तोड़े जाते रहे हैं और आगे भी ऐसा होता रहेगा. दिलों को तोड़े जाने और फिर जोड़े जाने का यह सिलसिला आज भी जारी है. अब तो यही कहा जा सकता है - जब तक सूरज चांद रहेगा ऐ नादान दिल तेरा यही हाल रहेगा.

हमने यह सब कुछ किताबों से जाना है और कुछ फ़िल्मों से सीखा है कि दिल टूटने के बाद क्या क्या होता है. इसका सही सही पता 1962 में आई फिल्म सन ऑफ इंडिया फिल्म से पता चला. इसमें अभिनेत्री कुमकुम दुखी दिल से आंखों में आंसू भरे हुए गीत गा रहीं थीं - दिल तोड़ने वाले तुझे दिल ढूंढ रहा है, आवाज़ दे तू कौन सी नगरी में छुपा है... ऐ दिल तोड़ने वाले तुझे दिल ढूंढ रहा है. अब बेचारी कुम कुम को क्या मालूम दिल तोड़ने वाले जाने चले जाते हैं कहां..वे फिर मिलते नहीं है. किसीऔर नए दिल की तलाश में निकल लेते हैं.

वैसे बतला दें कि तोड़ने के शब्द की हमारे देश के स्वतंत्रता संग्राम में भी बड़ी अहम भूमिका रही है. अंग्रेजों के जमाने आज़ादी के दीवानों की हड्डियां तोड़ी जाती थीं. अंग्रेजों के वही टारगेट हुआ करते थे. बाकी तो अंग्रेजी हुकूमत के गेस्ट आर्टिस्ट हुआ करते थे. उनके इसी आर्ट पर मोहित हो कर अंग्रेज जब देश छोड़ कर अपने वतन को लौटे तो देश की चाबी इन गेस्ट आर्टिस्टों को यानी सियासी कलाकारों को सौंप कर चले गए.

महात्मा गांधी को राष्ट्रपिता बनवाने में भी इस तोड़ने की क्रिया की बड़ी भूमिका रही है. वे अंग्रेजों के बनाए नमक कानून और नील कानून तोड़ कर जनता के हीरो बन गए थे. गांधी जी ने नमक कानून के खिलाफ साबरमती से दांडी तक की पदयात्रा की और नमक बना कर अंग्रेजों के बनाए कानून को तोड़ा. अंग्रेज हुकूमत ने किसानों के नमक बनाने पर रोक लगा दी थी. नमक हमारे देश का था. अंग्रेजों ने भी वही नमक खाया था पर उन्होंने नमक पर टैक्स लगा दिया. जैसे अंग्रेजों ने नमक के साथ गद्दारी की वैसा ही आगे चल कर जिन्ना और उनके साथियों ने भी किया. उन्होंने भी नमक हरामी करते हुए देश के दो टुकड़े करवा डाले.

नमक सत्याग्रह के बाद गांधी जी ने बिहार के चंपारण पहुंच कर नील कानून तोड़ा. उसके बाद अंग्रेज सरकार ने नील की खेती करने से इनकार करने वाले किसानों को तोड़ दिया. यानि तोड़ फोड़ का यह सिलसिला सदियों से चला आ रहा है.

बचपन में चोरी से बागानों से आम, इमली और बैर तोड़ने और तोड़ कर दौड़ने का जो मजा था उसका आनंद ही अलग होता था. देश आज़ाद होने के बाद तोड़ने का काम आम हो गया. जैसे आजादी के बाद सरकार ने हरेक परिवार को मकान, बिजली, पानी और सड़क देने का वायदा किया था. उसे वायदा तोड़ दिया गया. गांधी जी ने अंग्रेजी हुकूमत द्वारा बनाए गए जन विरोधी कानून को देश और जनहित में तोड़ा था.

आजादी के बाद देश की जनता पूरी तरह से गांधीवादी बन गई और उन्हीं का अनुसरण करते हुए अपनी ही सरकार के बनाए कानूनों और नियमों को तोड़ मरोड़ कर बापू को अपने श्रद्धा सुमन अर्पित कर रही है. इसमें चौराहों पर लगे सिंगल इस बात की गवाही देते हैं. कानून और नियमों को तोड़ना हमारी आज़ादी का सबूत बन गया है. वायदे तोड़ना तो सियासी दलों का शगल बन गया है. हर चुनाव में सियासी दलों द्वारा जनता से बड़े बड़े वायदे किए जाते हैं पर इनमें से कितने पूरे होते हैं यह सारा देश जानता है.

1962 में आई इस फिल्म अनोखी रात के गाने को ही देख लीजिए. फिल्म में अरुणा ईरानी उछल उछल कर चेतावनी देते हुए खुशी खुशी गाना गा रही है मेरी बेरी के बैर मत तोड़ो कोई कांटा चुभ जाएगा. और आज ज़माना इतना बदल गया है कि बैर तो छोड़िए आज आपने पत्नी भी तोड़ी तो माली या चौकीदार आपको दौड़ा देगा.

आजादी के बाद तोड़ने जोड़ने का काम आज भी जारी है. अब कानून तोड़े और तुड़वाने का काम आज भी जारी है. यूपी में योगी इस काम में पूरे देश में सबसे आगे हैं.उन्होंने वहां माफियाओं की कमर तोड़ दी है. सरकारी जमीनों पर कब्जा कर बनाए महल तोड़ दिए हैं. गुंडे, माफियाओं के हौसले तोड़ दिए हैं. और यह जनता भी कम तोडू नहीं है. वह भी एक दशक से उन सियासी दलों का गुरूर तोड़ रही है जिन्होंने जनता से किए वादों को तोड़ा है. इन सियासी दलों पर हिंदी गजलकार दुष्यन्त त्यागी की गजल पूरी तरह फिट बैठती है जिसमें कहा गया है कि यूं तो तय था चिरागा हर एक घर के लिए कहां मयस्सर नहीं शहर भर के लिए. सियासी नेताओं को समझ लेना चाहिए कि मतदाता की मार जब पड़ती है तो भले ही कोसों दूर तक की पदयात्रा कर लो या पूरा देश नाप लो...पर मंजिल है कि मिलती ही नही है.

प्रकृति का रसपान करने की पात्रता

संदीप खमेसरा

तन और मन की दुरुस्ती के लिए प्रकृति के मध्य समय व्यतीत करिए. इस एक सूत्र ने पहाड़ों और जंगलों की ओर नई दौड़ पैदा कर दी. और यकीनन, अधिक मात्रा में पहुंचने वाली मानवों की फौज से नदियां, पहाड़ और जंगल भी प्रदूषित होने लगे!

जंगल, पहाड़ और नदियों के बीच सिगरेटों के धुएं, शराब के जाम संग नाच गान, सेल्फियों के अनगिनत क्लिक्स, खाने पीने का बेतरतीब फैला कचरा....! जब यही करने प्रकृति के मध्य जा रहे हैं, तो अपने शहर में ही कर लीजिए!! वहां जाकर भी वही सब करना है, तो कैसे जुड़ पाए प्रकृति से?

प्रकृति से जुड़ने के लिए बहुत बड़ा अटेंशन चाहिए! प्रकृति की ताल से ताल मिलाने की लयबद्धता चाहिए! प्रकृति से एकात्म स्थापित करने की योग्यता चाहिए! जी भर कर उसे अनुभव कर पाएं, वैसी संवेदना चाहिए! प्रकृति की अनकही आवाज़ को सुन सकें, ऐसे कान चाहिए! उसकी खुशबू की महक को नथुनों में उतार पाएं,

ऐसी नाक चाहिए! उस प्रकृति के आभामंडल की चमक के दृष्टा बन पाएं, वैसी आंख चाहिए! प्रकृति में समय बिताने के लिए पहले यह तैयारी चाहिए. तब जो पात्रता बनती है, उसमें प्रकृति फिर अपना सर्वस्व उंडेलती है!!

भारतीय दर्शन ने सूत्र दिया 'ध्यान' का. कालांतर में धर्म के साथ जोड़ कर इस अनुपम विधा का सत्यानाश कर दिया गया. ध्यान का अर्थ ही अटेंशन से है. और जहां, ध्यान दिया गया, वहीं कुछ बेहतर होने की संभावना प्रबल हो जाती है. ध्यान से पढ़ाई करो, ध्यान से वाहन चलाओ, अपने स्वास्थ्य पर ध्यान दो....बेहतर ही होगा!! ध्यान का निरंतर विकास, कई अनछुई संवेदनाओं को जागृत करने का काम करता है, जो साधारणतया हमारी पकड़ से दूर होती है. सांस का आना जाना, शरीर के वेग और स्पंदन, खाने पीने और महसूस करने के अनुभवों में बड़ा अंतर आ जाता है. जीवन के प्रति अटेंशन मात्र से चीज़ों को देखने और समझने की क्षमता में बदलाव होने लगता है. ध्यान के लगातार संकल्पित प्रयोगों से स्पष्टता का अर्विर्भाव होता है और इसी से ज्ञान का जागरण भी.

जीवन, प्रकृति की ही देन है. प्रकृति से जुड़ने का एक अर्थ स्वयं को जानने से भी है. स्वयं की प्रकृति को जाने बिना जीवन में कोई आधारभूत परिवर्तन सम्भव नहीं है. जीवन के तमाम अनुभव चमत्कारिक रूप से आनंद से परिपूर्ण हो सकते हैं, यदि उनपर ध्यान देना आ जाए. प्रतिदिन के हजारों व्यर्थ के विचारों के साथ यह कभी संभव नहीं है. ध्यान के सूत्र, विचारों की तीव्रता को कम करके पूर्ण रूप से निर्विचारिता तक की यात्रा का मार्ग भी प्रशस्त करते हैं. इस स्थिति में फिर किसी संगीत का अनुभव हो, हवा या पानी का हो, सूर्य के ताप का हो, बारिश की बूंद का या प्रकृति का हो, वह बड़ा ही मज़ेदार हो जाता है.

जीवन के रंगों से जी भर कर यदि कलाकारी करनी ही है, तो पहले ध्यान (देना) सीखिए!!

बढ़ती हुई आबादी, सचेतक श्री रघुनाथ धोंडो कर्वे

डॉ रमेश कुमार बडवे
सर्जरी विशेषज्ञ

11 जुलाई 1987 को विश्व की जनसंख्या 5 अरब हो गई थी, बढ़ती हुई आबादी से उत्पन्न समस्याओ के प्रति जनसाधारण को अवगत कराने एवं परिवार नियोजन के प्रति लोगों जागरूक करने हेतु 11 जुलाई 1989 को संयुक्त राष्ट्र द्वारा विश्व जनसँख्या दिवस आयोजित किया गया था, उक्त आयोजन का सुझाव भारतीय मूल के श्री के. सी. जकारिया द्वारा दिया गया था जो कि उस समय वर्ल्ड बैंक वाशिंगटन मे वरिष्ठ डेमोग्राफर के पद पर कार्यरत थे. उसके पश्च्यात सन 1890 से प्रति वर्ष 11 जुलाई को बढ़ती हुई जनसँख्या के प्रति लोगों को आगाह करने हेतु विश्व जनसँख्या दिवस आयोजित किया जाता है.

लेकिन बहुत कम लोग यह जानते हैं कि भारत में जन्म नियंत्रण क्लिनिक की शुरुआत गणित के प्रोफेसर श्री रघुनाथ धोंडो कर्वे द्वारा 1921 में मुंबई में की गयी थी. रघुनाथ धोंडो कर्वे जन्म 14 जनवरी 1882 को

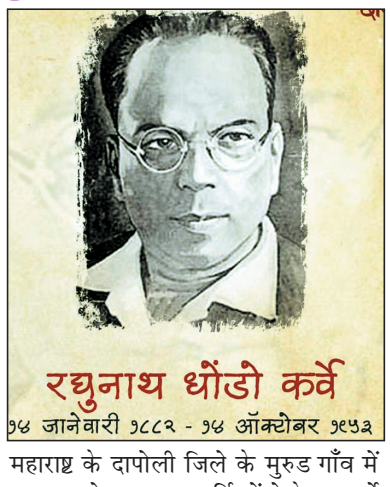

महाराष्ट्र के दापोली जिले के मुरुड गाँव में हुआ था, वे भारत रत्न महर्षि धोंडो केशव कर्वे के बड़े पुत्र थे, नौ वर्ष की आयु में 1891 में उनकी माँ राधा बाई का स्वर्गवास प्रसव के दौरान हुआ था ढ्ढ वे मेट्रिक परीक्षा में मुंबई प्रांत में सर्व प्रथम स्थान पर पास हुए थे, आगे की पढ़ाई उन्होंने पूना के फर्ग्यूसन कॉलेज से की थी ढ्ढ श्री रघुनाथ धोंडो केशव कर्वे मुंबई के विल्सन कॉलेज में गणित के प्रोफ़ेसर थे.

बढ़ती हुई आबादी देश के विकास में काफी बढ़ा अवरोध है यह बात उन्होंने सबसे पहले देश को अवगत कराई. 1921 में इन्होंने परिवार नियोजन हेतु क्लिनिक की शुरुआत की थी.इसी वर्ष ग्रेट ब्रिटेन में भी मेरीस्टॉप द्वारा पहला गर्भ निरोधक क्लिनिक स्थापित किया गया था. सन 1923 में इन्होंने सन्तति नियमन आचार और विचार नाम की पुस्तक प्रकाशित की थी.

उन्होंने विधवा पुन: विवाह की वकालत भी की एवं स्वयं एक विधवा से विवाह किया व विधवाओं की शिक्षा को बढ़ावा दिया. उस काल में परिवार नियोजन कार्य को काफी घृणित माना जाता था एत: उनका काफी जनविरोध हुआ व उन्हें सन 1925 में विल्सन कॉलेज मुंबई से त्यागपत्र देना पडा. लेकिन उन्होंने जनसंख्या नियंत्रण का कार्य चालू रखा, इस कार्य में उसकी पत्नी श्रीमती मालती बाई ने भरपूर सहयोग किया. उनको पत्नी के आलावा डॉक्टर आंबेडकर का समर्थन भी प्राप्त हुआ था.

जन-जागरण हेतु जुलाई 1927 से इन्होंने समाज - स्वास्थ्य नाम से एक मासिक पत्रिका प्रकाशित की जिसका प्रकाशन लगभग 26 वर्ष तक होता रहा. 14 अक्टूबर 1953 को 71 वर्ष की आयु में श्री रघुनाथ धोंडो केशव कर्वे का स्वर्गवास हो गया. ऐसे दूरदृष्टि वाले राष्ट्रभक्त एवं समाजसेवी बिरले ही होते हैं

प्राकृतिक खेती के लिए गौपालन आवश्यक

25 दिसंबर को बसामन मामा गो-अभयारण्य में प्राकृतिक खेती सम्मेलन

उप मुख्यमंत्री राजेन्द्र शुक्ल ने बसामन मामा गो-अभयारण्य के निरीक्षण के दौरान कहा कि अभयारण्य के आसपास का क्षेत्र विंध्य अंचल में प्राकृतिक खेती का प्रमुख केन्द्र बनेगा।

उन्होंने कहा कि प्राकृतिक खेती में गौपालन की महत्वपूर्ण भूमिका है और कृषि क्षेत्र को मजबूत बनाने के लिए पशुपालन भी अत्यंत आवश्यक है। इसी उद्देश्य से 25 दिसंबर को पूर्व प्रधानमंत्री स्व. अटल बिहारी वाजपेयी के जन्मदिन पर अभयारण्य में प्राकृतिक खेती सम्मेलन आयोजित किया जाएगा, जिसमें कृषि विशेषज्ञ और प्राकृतिक खेती से जुड़े किसान शामिल होंगे।

उप मुख्यमंत्री ने बताया कि अभयारण्य में 8 हजार से अधिक निराश्रित गौवंश को आश्रय दिया गया है। इनके गोबर और गोमूत्र के उपयोग से आसपास के क्षेत्रों को रासायनिक खाद से मुक्त करने में मदद मिलेगी। यहां प्राकृतिक एवं जैविक खेती के साथ दुधारु पशुओं के नस्ल सुधार और महिला स्व-सहायता समूहों को बढ़ावा देने पर भी कार्य किया जा रहा है, जिससे यह गौशाला आदर्श मॉडल का रूप ले रही है।